



शंकराचार्य एवं एडमंड हुसल के चेतना सम्बन्धी अवधारणा का तुलनात्मक अध्ययन

Abhishek Kumar

Assistant Professor, Department of Philosophy, Ganpat Sahay
P.G. College, Sultanpur, Awadh University



सारांश

प्रस्तुत शोध-पत्र का शीर्षक 'शंकराचार्य और एडमंड हुसल के चेतना सम्बन्धी अवधारणा का तुलनात्मक अध्ययन' है। इसके अन्तर्गत मेरा उद्देश्य चेतना सम्बन्धी विचारधारा पर आदि शंकराचार्य और एडमंड हुसल के मतों का तुलनात्मक परीक्षण करना है। ध्यातव्य है कि कई बार यह प्रश्न उठता है कि देश, काल, विचारधारा और परम्परा से पूर्णतया भिन्न दार्शनिकों या दार्शनिक सम्प्रदायों में तुलना कहाँ तक उचित है? परन्तु मेरा यह मानना है कि यद्यपि देश-काल, परिस्थिति, संस्कृति अलग-अलग हो सकती है, फिर भी, यह पूर्णतया संभव है कि विचारधाराओं में कुछ ऐसे बिन्दु मिल सकते हैं, जहाँ हम समानता या असमानता के आधार पर तुलना कर सकते हैं। आज के वैश्वीकृत जगत (Globalised world) में यह स्वाभाविक भी है और आवश्यक भी है कि पूर्व और पश्चिम के विचारधाराओं में एक सामञ्जस्यपूर्ण दृष्टिकोण विकसित हो।

शब्द कोश – चेतना, शंकराचार्य, एडमंड हुसल, विषयापेक्षा, अतीन्द्रिय अहं, संरचना

प्रस्तावना

प्रस्तुत शोध पत्र में एक ओर 8वीं शती के प्राच्य मनीषी आदि शंकराचार्य हैं तो दूसरी ओर 20वीं शती के जर्मन विद्वान एडमंड हुसल। दोनों के मध्य देश और काल का बहुत बड़ा अन्तराल है, सभ्यता और संस्कृति भी भिन्न है, अतः यह तो नहीं कहा जा सकता कि एक का दूसरे पर किसी तरह का प्रभाव है। फिर भी, एक प्रयास है, यह जानने का, यह समझने का कि परिस्थितियों में इतने अन्तर के बावजूद उनके चेतना सम्बन्धी मतों में क्या कोई सार्थक तुलना संभव है? क्या साम्य और वैषम्य के ऐसे बिन्दु मिल सकते हैं, जिससे दोनों विचारकों में कोई वैचारिक तुलना की जा सके? प्रस्तुत शोध-पत्र इन्हीं प्रश्नों पर केन्द्रित है।

दोनों दार्शनिकों के मध्य का तुलनात्मक अध्ययन निम्नलिखित बिन्दुओं के आलोक में किया जायेगा—

- (1) विषयापेक्षा (Intentionality)
- (2) हुसल की शुद्ध चेतना (Pure Consciousness) और आदि शंकर की शुद्ध चेतना।
- (3) शंकराचार्य का साक्षि-चैतन्य और एडमंड हुसल का अतीन्द्रिय अहं (Transcendental Ego)
- (4) शांकर वेदान्त में जीव और एडमंड हुसल के दर्शन में आनुभविक अहं
- (5) शांकर वेदान्त में 'नेति-नेति' और एडमंड हुसल का 'एपोखे' (Epoche)

विषयापेक्षा—

हुसल की फेनोमेनोलॉजी में विषयापेक्षा चेतना का महत्वपूर्ण लक्षण है। एडमंड हुसल का मानना है कि चेतना विषयापेक्षी होती है। विषयापेक्षा, चेतना का अवियोज्य लक्षण है। चेतना कभी भी निर्विषयक नहीं हो सकती। यदि चेतना है तो अनिवार्यतः उसका एक विषय होगा, जिस ओर चेतना उन्मुख होगी।

इस संबंध में अद्वैत वेदान्त मानता है कि चेतना वास्तव में विषयापेक्षी नहीं है, बल्कि यह अहं (ego) के द्वारा विषयापेक्षी बन जाती है। क्या चेतना सदैव विषयापेक्षी होती है? अद्वैती इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक रूप में देते हैं। उनका कहना है कि चेतना की तीन व्यावहारिक अवस्थायें जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति होती है। इनमें

से जाग्रत और स्वप्न में ही चेतना विषयापेक्षी होती है। जाग्रत अवस्था में जीव विश्वरूप में बाह्य विषयों का अनुभव करता है। स्वप्नावस्था में जीव तेजस रूप में आभ्यान्तर विषयों का अनुभव करता है।

सुषुप्ति की अवस्था में कोई भी विषय चेतना के सम्पर्क में नहीं रहता है, परन्तु यहाँ चेतना का लोप नहीं होता। यदि चेतना का अभाव हो जाये तो व्यक्ति यह कहने में असमर्थ हो जायेगा कि 'मुझे अच्छी नींद आई' या 'सोने के दौरान मुझे कुछ ज्ञात नहीं है।' तात्पर्य यह है कि सुषुप्ति में चेतना तो है, परन्तु विषयापेक्षी नहीं है।

इस तरह शांकर वेदान्त के अनुसार चेतना विषय रहित भी हो सकती है। वह विषयापेक्षी तब होती है, जब जाग्रत और स्वप्न की अवस्था में उसका सम्पर्क मन (Mind) से होता है। अद्वैत वेदान्त का मत है कि चेतना का विषयापेक्षी होना, अनिवार्य नहीं है।

हुसर्ल की शुद्ध चेतना (Pure Consciousness) और आदि शंकर की शुद्ध चेतना—

हुसर्ल के अनुसार विशुद्ध चेतना एक अतीन्द्रिय विषयिता (Transcendental Subjectivity) है; जो कि आधारभूत (Foundational) और संरचनात्मक (Constitutive) है और यह अतीन्द्रिय एपोखे द्वारा प्राप्त होती है। हुसर्ल इस चेतना को जगत को संरचित करने वाली सत्ता कहते हैं, क्योंकि इसी की वजह से जगत अर्थवान (Meaningfull) होता है। चेतना का अपना परम अस्तित्व (Absolute existence) है, जगत की अन्य वस्तुओं की तरह अस्तित्ववान नहीं है। हुसर्ल अपने ग्रन्थ *Ideas* में कहते हैं कि बिना चेतना के कोई जगत नहीं होगा।

Consciousness has an absolute existence not akin to the existence of things in nature. As he will argue in *Ideas I* (1913), without consciousness there would not be a world at all.¹

यही विशुद्ध संरचनात्मक चेतना ही सभी संज्ञानात्मक क्रियाओं (Cognitive Acts) को अन्तिम साक्ष्य प्रदान करता है।

इस सम्बन्ध में यदि आदिशंकराचार्य के चेतना संबंधी मत पर दृष्टिपात करें तो वे भी विशुद्ध चेतना को ही एकमात्र मूलभूत तत्व मानते हैं। यही आधारभूत वास्तविकता है, जो सभी संज्ञानात्मक क्रियाओं को संभव बनाता है। यह वह चेतना है, जो स्वयं प्रकाश और पर प्रकाशक दोनों है। अपने वास्तविक स्वरूप में चेतना निर्विषयक (Non-Intentional) है। यह तभी विषयापेक्षी होती है, जब इसका सम्पर्क अविद्या से होता है। चेतना आनुभविक शरीर और जगत से स्वतन्त्र है, एक है। इस चेतना को ही आत्मा या ब्रह्म कहते हैं। इस चेतना या आत्मा का कभी निराकरण नहीं हो सकता। आचार्य अपने शारीरिक भाष्य में कहते हैं कि—

आत्मनश्च प्रत्याख्यातुम शक्यत्वात्, य एव निराकर्ता तस्यैवात्मत्वात् ॥²

शंकराचार्य का साक्षि-चैतन्य और एडमंड हुसर्ल का अतीन्द्रिय अहं (Transcendental Ego)—

आदि शंकराचार्य के साक्षि-चैतन्य और एडमंड हुसर्ल के अतीन्द्रिय अहं के बीच भी तुलना के कुछ बिन्दु दृष्टिगोचर होते हैं। सबसे पहले यदि शंकराचार्य के साक्षि-चैतन्य पर विचार करें तो यह स्वप्रकाश शुद्ध निर्विकार द्रष्टा है। आचार्य शंकर कहते हैं— 'सर्वेषां भूतानां साक्षी सर्वद्रष्टा'³ अर्थात् साक्षि-चैतन्य समस्त भूतों का सर्वद्रष्टा है। यह किसी प्रकार के अच्छे या बुरे अनुभव में लिप्त नहीं होता। यह अकर्ता और भोग रहित है।

मुण्डक उपनिषद् में इसी बात को इस रूप में कहा गया है—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते। तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति अनश्नन् नन्योऽभिचाकशीति ॥⁴

अर्थात् एक वृक्ष पर दो पक्षी साथ-साथ रहते हैं, एक स्वादिष्ट फल का भक्षण करता है और दूसरा केवल देखता रहता है। यह द्रष्टा ही साक्षी है।

साक्षि-चैतन्य बिना किसी अन्तःइन्द्रिय के भी समस्त आन्तरिक और बाह्य विषयों का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करता है।

Witnessing consciousness knows, although without modes of inner sense, all internal as well as external objects directly.⁵

अब यदि हुसर्ल के अतीन्द्रिय अहं (Transcendental Ego) पर विचार करें तो इसे एक शोधित चेतना (Purified Consciousness) के रूप में लिया जाता है। यह एपोखे द्वारा प्राप्त होता है। एपाखे के बाद की यह

चेतना जिसे अतीन्द्रिय अहं कहते हैं, इसकी तुलना अद्वैत वेदान्त के 'साक्षी' से की जा सकती है। एडमंड हुसर्ल के अन्तिम दिनों में इनके सहयोगी और मित्र रहे यूगेन फिंक (Eugen Fink) के विचारों पर ध्यान दें तो वे हुसर्ल के अहं (Ego) के तीन रूप बताते हैं। वो तीन रूप इस प्रकार हैं—

पहला, आनुभविक अहं (Empirical Ego) जो कि बाह्य जगत से सम्बन्धित है।

दूसरा, अतीन्द्रिय अहं (Transcendental Ego) जो कि जगत को संरचित करता है, परन्तु स्वयं जगत में नहीं है।

तीसरा, अतीन्द्रिय अहं ही है, जो कि द्रष्टा (onlooker) के रूप में है। यह एपोखे को संपादित करता है।

1. The Ego which is pre occupied with the world (I, the human being as a unity of acceptance), together with my intermundane life of experience);
2. The transcendental ego for whom the world is pre-given in the flow of the universal apperception and who accept it;
3. The 'on looker' who performs the Epoche.⁶

उपर्युक्त प्रथम दो अहं अर्थात् आनुभविक अहं (Empirical ego) और अतीन्द्रिय अहं (Transcendental Ego) के बारे में देखें तो पहला प्राकृतिक (Natural) परिवेश के अन्तर्गत है तथा दूसरा अहं (ego) सभी प्राकृतिक पूर्ण अवधारणाओं से मुक्त हैं, शोधित (Purified) है। तीसरा अतीन्द्रिय अहं ही वह प्रेक्षक (observer) है जो अन्य दोनों के विभेद का अनुभव करता है, वह ही द्रष्टा (On-looker) है।

फिंक की इस अवधारणा पर सहमति प्रकट करते हुए एडमंड हुसर्ल ने फिंक के लेख की प्रस्तावना में कहा कि— मुझे यह बताते हुए प्रसन्नता हो रही है कि इस लेख में ऐसी कोई बात नहीं है, जिसे मैं अपने स्वयं के विचार के रूप में स्वीकार न कर सक।

I am happy to be able to state that it contains no sentence which I could not completely accept [as] my own or openly acknowledge as my own conviction.⁷

शांकर वेदान्त में जीव और एडमंड हुसर्ल के दर्शन में आनुभविक अहं (Empirical Ego)—

आदि शंकराचार्य के जीव और एडमंड हुसर्ल के आनुभविक अहं में भी तुलनात्मक बिन्दु देखे जा सकते हैं। सर्वप्रथम यदि जीव पर विचार करें तो जीव को देहेन्द्रिय, अन्तःकरण से युक्त, सुख—दुःख का अनुभव करने वाला अल्पज्ञ तथा सीमित माना गया है। शारीरिक भाष्य में आचार्य कहते हैं—

अस्त्यात्मा जीवाख्यः भारीरेन्द्रिय पञ्जराध्यक्षः कर्मफल सम्बन्धी।⁸

अर्थात् जीव, शरीर और इन्द्रिय रूपी पंजर का स्वामी है तथा कर्मफल से संबंधित है। जीव अहंकार—ममकार से युक्त है, देश—काल के अधीन है। जीव का जीवत्व अविद्याकृत है। वेदान्त परिभाषा में भी कहा गया है कि जीव नाम, अन्तःकरण से अवच्छिन्न चैतन्य है।

जीवोनामान्तः करणावच्छिन्न चैतन्यम्।⁹

एडमंड हुसर्ल के फेनोमेनोलॉजी में सामान्यतः दो अहम् (Ego) की चर्चा की गई है : अतीन्द्रिय अहं (Transcendental Ego) और आनुभविक अहं (Empirical Ego)। हुसर्ल ने अपने ग्रन्थ 'Logical Investigations' में कहा है कि आनुभविक अहं (empirical ego) का आशय मन, शरीर और चेतना से युक्त सत्ता से है, जिसे साधारण शब्दों में व्यक्ति (Person) कहा जाता है। इस अहं का अनुभव उसी तरह होता है, जैसे हम किसी बाह्य वस्तु का करते हैं।

What is meant by 'empirical ego' in this work is not very different from what understood by a 'person' in ordinary discourse with his/her mind and body and as having a conscious agency... This ego, as he puts it, is a 'thing like object and can be perceived' just as we perceive an external thing.¹⁰

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि शंकराचार्य के जीव की तरह हुसर्ल का अतीन्द्रिय अहं भी व्यक्तिरूप है। शंकराचार्य के दर्शन में जीव अविद्या और अज्ञान से अवच्छिन्न इस जगत में निमग्न है, उसी तरह अतीन्द्रिय अहं भी एपोखे और रिडक्शन से परिष्कृत नहीं हुआ रहता है और इस जगत से संबंधित रहता है।

शांकर वेदान्त में 'नेति-नेति' और हुसर्ल के दर्शन के एपोखे (Epoche)—

शांकर मत का नेति-नेति शब्द और हुसर्ल का एपोखे सम्बन्धी सिद्धान्त भी आपस में तुलनीय है। शांकर वेदान्त में 'नेति-नेति' एक नकारात्मक आदेश है। इसके माध्यम से 'सत्' को निर्देशित किया जाता है। आत्मा को निर्देशित करने के प्रयास में उसे सभी चीजों से भिन्न दिखाया जाता है कि सत् यह नहीं है, यह नहीं है (नेति-नेति)।

स एश नेति-नेति आत्मा।¹¹

हुसर्ल के दर्शन में एपोखे का सिद्धान्त भी यही कहता है कि सत्ता के शुद्ध अनावरण के लिए एपोखे आवश्यक है। एपोखे वह माध्यम है, जिसके द्वारा हम हर विचार, मान्यता से एक दूरी बना लेते हैं।

हुसर्ल ने अपने दर्शन में एपोखे का प्रयोग स्वयं को वस्तुनिष्ठता (objectivity) से निकालकर आत्मनिष्ठता (Subjectivity) को रेखांकित करने के लिए किया है। ठीक उसी तरह आदि शंकर ने भी आत्म प्राप्ति के लिए शरीर, मन, इन्द्रियाँ आदि का स्थगन किया है अर्थात् यहाँ भी एक तरह का एपोखे ही प्रयुक्त हुआ है, जिसके द्वारा अनात्म (युष्मद्) का त्याग कर, आत्म (अस्मद्) को प्राप्त करने की बात कही गई है। यहाँ उस प्राकृतिक दृष्टिकोण या अध्यास जिसमें हम कहते हैं कि 'मैं गोरा हूँ', 'मैं मोटा हूँ' आदि का खण्डन होता है और अतीन्द्रिय आत्मनिष्ठता जिसे आत्मा या ब्रह्म कहते हैं, उस तक पहुँचने की बात की जाती है।

उपर्युक्त विचार बिन्दुओं को रखने के बाद यदि उनका मूल्यांकन किया जाय तो प्रथमतः यह देखा गया कि विषयापेक्षा (Intentionality) के सन्दर्भ में दोनों दार्शनिक कुछ हद तक एकमत हैं। परन्तु, यह तुलना सीमित अर्थ में ही संभव है, क्योंकि हुसर्ल सभी परिस्थितियों में चेतना को विषयापेक्षी मानते हैं, विषयापेक्षा चेतना का अनिवार्य गुण है, जबकि शंकराचार्य चेतना को मूलतः निर्विषयक मानते हैं। उनका मानना है कि चेतना पर जब मन, अन्तःकरण का आवरण पड़ता है, तब वह विषयापेक्षी हो जाती है। शांकर वेदान्त में विषयोन्मुख होना चेतना का परिस्थितिजन्य लक्षण है, अनिवार्य नहीं।

दूसरा, विज्ञान चेतना के विषय पर देखें तो दोनों विचारक इस बिन्दु पर तो सहमत दिखाई पड़ते हैं कि चेतना एक आधारभूत तत्व है, यह जगत अपने अर्थ और अस्तित्व के लिए उसी पर निर्भर है। चेतना ही साक्ष्य प्रदाता है, सर्वोच्च है। परन्तु, यहाँ असहमति भी दिखाई देती है, क्योंकि जहाँ हुसर्ल की चेतना सक्रिय और संरचनात्मक है, वहीं आदिशंकराचार्य की चेतना अक्रिय है। यह मूलतः संरचनात्मक नहीं है। यहाँ विषयापेक्षा के माध्यम से जगत को संरचित करने का प्रयास नहीं किया गया है। जहाँ तक जगत की सत्ता का प्रश्न है तो उसे माया का ही एक उत्पाद कहा है, जो वास्तविक रूप से अस्तित्ववान नहीं है। जगत जब वैश्विक भ्रम या माया की दृष्टि से देखा जाता है, तभी हमें प्रतीत होता है।

तीसरा, शंकराचार्य के साक्षि-चैतन्य और हुसर्ल के अतीन्द्रिय अहं (Transcendental Ego) की तुलना में हमने देखा कि दोनों ही इसे निर्विकार द्रष्टा (Disinterested On-looker) के रूप में वर्णित करते हैं और ऐसा मानते हैं कि यही निर्विकार द्रष्टा ही है जो आनुभविक अहं और अतीन्द्रिय अहं के भेद को संभव बनाता है। परन्तु इसके कुछ अन्य स्वरूपों पर मतभेद है, जैसे— जहाँ हुसर्ल का अतीन्द्रिय अहं एक संरचनात्मक अहं (Constitutional Ego) है, वहीं शंकराचार्य का साक्षि ऐसा नहीं है। इस विषय की प्रमुख समकालीन चिन्तक प्रो० बीना गुप्ता (Bina Gupta) ने दोनों में अन्तर करते हुए कहा कि हुसर्ल का द्रष्टा किसी संज्ञानात्मक क्रिया की आवश्यक दृष्टा नहीं है, जबकि अद्वैत वेदान्त में साक्षि के बिना कोई भी ज्ञान संभव नहीं है।

The existence of this on-looker, however is not, for Husserl, a necessary condition for the occurrence of any cognition. The Advaitins, on the other hand, maintain that without this on-looker no cognition at all would be possible.¹²

चौथा, ऐसा देखा गया कि चेतना के शुद्ध स्वरूप की प्राप्ति में हुसर्ल और शंकराचार्य दोनों प्राकृतिक या व्यावहारिक जगत से परे हटने की बात करते हैं और इसी के लिए शंकराचार्य ने नेति-नेति का प्रयोग किया और हुसर्ल ने एपोखे का प्रयोग किया, परन्तु यहाँ पर विषमता के बिन्दु द्रष्टव्य होते हैं। आदिशंकराचार्य विज्ञान चेतना की प्राप्ति में व्यावहारिक जगत का, प्राकृतिक दृष्टिकोण का पूर्णतया निरसन कर देते हैं, क्योंकि ये सब भ्रम या विवर्त के स्तर पर ही हैं। जिस क्षण परमार्थ बोध हुआ, उसी क्षण इनकी सत्ता पूर्णतया समाप्त हो जाती है, परन्तु हुसर्ल का दृष्टिकोण ऐसा नहीं है। वे जगत से असम्बन्धन तो करते हैं, विचार की प्रक्रिया में जगत

और प्राकृतिक दृष्टिकोण को स्थगित या कोष्ठीकृत करने की बात भी करते हैं, परन्तु अस्थाई रूप से। यहाँ चेतना में जगत् की सत्ता एक संरचित विषय के रूप में अस्तित्ववान रहती है।

उपर्युक्त वि"लेषणों से यह बात तो स्पष्ट हो जाती है कि जहाँ दोनों दार्शनिकों में कुछ बिन्दुओं पर संगति दिखती है, वहीं असंगति के भी बिन्दु दिखाई दिये हैं। वास्तव में, यह असंगति उनके दार्शनिक योजना से सम्बन्धित है। यह सत्य है कि दोनों विचारक वि"द्व चेतना का स्वरूप उद्घाटित करने का प्रयास कर रहे थे, परन्तु उनकी विचार"शैली भिन्न थी। हुसर्ल की गवेषणा में ज्ञानमीमांसीय और तार्किक पक्ष प्रमुख था, जिससे वे चेतना का पुनर्निरीक्षण करना चाहते थे, वहीं शंकराचार्य के विचार प्रक्रिया में तत्वमीमांसा आर नैतिकता का प्राधान्य था, अतः उनका उद्दे"य इस ससार से मुक्ति और अद्वैत तत्व की स्थापना करना था। दूसरी बात यह है कि जो असंगति दिख रही है उसमें दोनों परम्पराओं के मूल में निहित मान्यताएँ भी हैं, जैसे भारतीय दर्शन का दृष्टिकोण आध्यात्मिक होता है, वहीं पा"चात्य दर्शन वैज्ञानिक होता है। भारतीय दर्शन में चेतना और मनस् के बीच अन्तर करते हैं, परन्तु पा"चम में ऐसे अन्तर को प्रमुखता नहीं दी जाती है, इत्यादि। उपर्युक्त विचारकों के चिन्तन को ये मान्यताएँ अव"य प्रभावित करती हैं।

इस तरह यदि चयनित विचारकों की समस्त परिस्थितियों, दे"ा – काल, परम्परा आदि को ध्यान में रखते हुए हम तुलनात्मक वि"लेषण करें तो यह कह सकते हैं कि दोनों विचारकों में तुलना सीमित अर्थ में ही सम्भव है। परन्तु, यदि बहुत उत्कट दृष्टिकोण न रखते हुए उदारवादी दृष्टिकोण से देखें तो इस तुलना में अनुरूपता के बहुत से बिन्दु दिख जाते हैं जो अद्वैत वेदान्त को फेनोमेनोलॉजी की दृष्टि से और फेनोमेनोलॉजी को अद्वैत की दृष्टि से देखने, समझने में लाभप्रद होगा। इससे पूर्व और पा"चम के विचारों के बीच एक वैचारिक सेतु का निर्माण सम्भव होगा। इस तुलना से एक बात और स्पष्ट हो जाती है कि यद्यपि दर्शन पूरी तरह से अपनी सभ्यता से अलग नहीं हो सकता, परन्तु इस बात की संभावना भी रहती है कि अलग – अलग ढंग से उपजी सभ्यताओं जिनमें विचारक की लेखन भाषा, लेखन शैली के साथ पूरी वैचारिक योजना भिन्न होती है, उनमें भी तुलनात्मक बिन्दु निकल आते हैं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

Moran, Dermot (2000): *Introduction to Phenomenology*, Routledge Taylor and Francis Group, London & New York, p. 136

शारीरक भाष्य, 1/1/4

मिश्र, अर्जुन और मिश्र, हृदय नारायण (2000): *अद्वैत वेदान्त*, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृ० 162
मुण्डक उपनिषद्, 3/1/1

Bhattacharyya, Sibajiban (1992): 'Phenomenology and Indian Philosophy', in Chattopadhyaya, D.P., Embree, Lester and Mohanty, J.N., eds., *Phenomenology and Indian Philosophy*, ICPR, New Delhi, India, p. 70

Fink, Eugen (1970) : 'Husserl's Philosophy and Contemporary Criticism', in Elveton, R.O. (ed.), *The Phenomenology of Husserl*, Quadrangle Books, Chicago, pp. 115-116

Ibid., p. 71

शारीरक भाष्य, 2/3/17

धर्मराजाध्वरीन्द्र (2010): *वेदान्तपरिभाषा* (व्याख्या-डॉ० गजानन शास्त्री मुसलगांवकर), चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, पृ० 85

Balslev, Anindita Niyogi (1992) : 'Analysis of I-Consciousness in the Transcendental Phenomenology and Indian Philosophy', in Chattopadhyaya, D.P., Embree, Lester and Mohanty, J.N., eds., *Phenomenology and Indian Philosophy*, ICPR, New Delhi, India, p. 133

बृहदारण्यक उपनिषद्, 4/4/22

Gupta, Bina (1998): *The Disinterested Witness: A Fragment of Advaita Vedanta Phenomenology*,
Northwestern University Press, USA, p. 5



Abhishek Kumar

Assistant Professor, Department of Philosophy, Ganpat Sahay P.G. College,
Sultanpur, Awadh University